शब्द–ब्रह्म
ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 सितंबर 2015
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

भविष्य का समाज और ट्रस्टीशिप: सिद्धांत और व्यवहार

डॉ..पुष्पेंद्र दुबे
विभागाध्यक्ष, हिन्दी विभाग
महाराजा रणजीतसिंह कॉलेज आफ प्रोफेशनल साइंसेस
खण्डवा रोड, इन्दौर, मध्यप्रदेश, भारत

वैश्विक परिस्थिति और भारत

इक्कीसवीं शताब्दी में भारत में नयी संभावनाएं दिखाई दे रही हैं। विश्व में राजनैतिक साम्राज्यवाद समाप्त हो गया है, साम्यवादी विश्व बिखर गया है, लोकतंत्र का तेजी से प्रसार हो रहा है, संचार क्रांति, सूचना क्रांति ने पूरे विश्व को एक गांव में रूपांतरित कर दिया है। आर्थिक क्षेत्र में विश्व अर्थव्यवस्था ने एक निश्चित आकार ले लिया है। शिक्षा के लोकव्यापीकरण और ज्ञान आधारित समाज के विस्तार ने नवीन वैश्विक मानव मूल्यों को अंगीकार किया है। वस्तुतः नये विश्व और नये मनुष्य की ही रचना हो रही है। शोषण और हिंसा पर आधारित समाज में से शोषण मुक्त और अहिंसक समाज का जन्म कैसे हो, इस विषय पर बीसवीं सदी के संत और मनीषी आचार्य विनोबा भावे के विचार अत्यंत प्रासंगिक हैं।

बीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में जबकि दुनिया के लगभग 150 देश गुलाम थे और भारत गुलाम देशों में सबसे बड़ा देश था। महात्मा गांधी के नेतृत्व में भारत ने आजादी की अनूठी लड़ाई लड़ी और वह स्वतंत्र हुआ। भारत के आजाद होने के बाद दुनिया के दूसरे गुलाम देश भी आजाद हुए। लेकिन दूसरी ओर दुनिया के देश उपभोक्तावादी संस्कृति, औद्योगिक संस्कृतिकी आर्थिक-सामाजिक-मानसिक-नैतिक गुलामी में फंस गया है।

साम्यवाद नहीं साम्ययोग

दुनिया के अनेक प्रगतिशील विचारकों और बुद्धिजीवियों को आशा थी कि कार्लमार्क्स की विचारधारा समानता, स्वतंत्रता और बंधुत्व की विश्व संस्कृति का विकास कर सकेगी, जहां 'मुक्त मानवों का मुक्त भाईचारा' होगा। सारा समाज शोषण रहित और शासन रहित होगा, परंतु सोवियत संघ के विघटन, वहां गृहयुद्ध की विभीषिका और चीन के थ्यान आन मन स्क्वेयर में लोकतंत्र समर्थकों पर गोलियों की बौछारों ने यह सिद्ध कर दिया कि साम्यवाद या माक्र्सवाद में विष्व को आर्थिक गुलामी से मुक्त करने की शक्ति और प्रेरणा नहीं रही है।

विनोबा एक ऐसे समाज विज्ञानी हैं, जिनके द्वारा किया गया शोधन वर्तमान समस्याओं के समाधान के लिए अत्यंत प्रासंगिक है। हमारा देश विश्व की प्रतिकृति है। विश्व में आज जैसी परिस्थिति है उसका प्रतिबिंब भारत में दिखाई देता है। यदि भारत की समस्याओं का निदान हम कर सकें और निराकरण कर सकें तो सारे विश्व पर उसका प्रभाव होगा। हमारा सौभाग्य है कि हमारे देश में विनोबा जैसे विचारक और मनीषी हुए, जिन्होंने हमारी तीव्र से तीव्र समस्या का वैचारिक और व्यावहारिक समाधान प्रस्तुत

शब्द–ब्रह्म
ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 सितंबर 2015
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

किया है। वस्तुतः उन्होंने वर्तमान शोषण, हिंसा और उपभोगवादी संस्कृति के विकल्प के रूप में नयी साम्ययोगी संस्कृति का प्रारूप ही प्रस्तुत किया है।

आर्थिक समस्या और समाधान

विनोबा जी ने वर्तमान आर्थिक समस्याओं के समाधान के रूप में जो विचार और कार्यक्रम दिए वे विचारणीय हैं:

1 उपभोक्तावादी संस्कृति के शमन के लिए 2 त्याग$ 1 भोग त्र सम्यक जीवन का सूत्र, अस्तेय, अपरिग्रह और विष्वास वृत्ति (ट्रस्टीषिप) का सिद्धांत,

2 भूमि समस्या के समाधान के लिए भूदान यज्ञ

3 आर्थिक परावलंबन, बेरोजगारी, अर्ध बेरोजगारी और गरीबी के निराकरण के लिए ग्रामाभिमुख खादी ग्रामोद्योग

4 टूटती बिखरती ग्राम व्यवस्था की रक्षा के लिए ग्रामदान, ग्रामस्वराज्य

5 साम्प्रदायिक, जातीय, दलीय और हिंसक गतिविधियों के शमन के लिए शांति सेना

6 पैसे पर आधारित बाजार अर्थव्यवस्था (जिससे सट्टा, ब्याज, किराया, संग्रह, मुनाफा और गला काट स्पर्धा निहित है) के स्थान पर कांचन मुक्त, बाजार मुक्त अर्थव्यवस्था का विचार

7 जीवाष्म ऊर्जा जैसे कोयला, पेट्रोल, डीजल, अणु ऊर्जा पर आधारित अति ऊर्जा केंद्रित हिंसक टेक्नालाॅजी के स्थान पर परिमित अहिंसक ऊर्जा जैसे मानव ऊर्जा, मवेषी ऊर्जा, जल ऊर्जा, पवन ऊर्जा, गोबर गैस ऊर्जा, सौर ऊर्जा जैसे उन्नत मानवीय टेक्नालाजी का विचार। ट्रैक्टर खेती, कीटनाषकों पर आधारित रासायनिक खेती के स्थान पर बैल खेती, गोबर खाद और संतुलित अहिंसक पद्धति की खेती और गोरक्षा का विचार।

आज भौतिक समृद्धि और वस्तुओं की प्रचुरता में मनुष्यता कहीं खो गई है। हम अपनी शांति, स्वाधीनता और पारस्परिकता को खोकर जो भौतिक वस्तुएं और सुख खरीद रहे हैं क्या यह सौदा महंगा नहीं है ? क्या यह संभव है कि हम शांति, साम्य और समृद्धि का समन्वय साधन सकते हैं ? यदि ऐसा कर सकते हैं तो कैसे ? इन्हीं प्रष्नों का उत्तर विनोबा जी ने दिया है।

क्रांति की नयी परिभाषा

समाज जीवन में प्रचलित क्रांति से भिन्न अर्थ विनोबा ने दिया है। उनके अनुसार समाज जीवन मूल्यों में बुनियादी परिवर्तन होने को क्रांति कहते हैं और परिवर्तित जीवन मूल्यों के अनुसार जीवन जीना विकास है। यह क्रांति की प्रक्रिया सतत चलती रहती है। मनुष्य ने कर्म शक्ति को कृति में रूपांतरित किया। इसीसे संस्कृति का निर्माण हुआ। विकृतियों से संस्कृति की ओर जाना विकास है। इसका पहली पायदान आरण्यक संस्कृति रही है। इस जीवन की मुख्य उपलब्धियां इस प्रकार थीं: समाज व्यवस्था में 'परिवार संस्था' का विकास। परिवार में सेवा त्याग वात्सल्य-षिक्षण सहयोग आदि अनेक मानवीय मूल्यों का विकास हुआ।

2 मानव शक्ति से चलने वाले उपकरण ओर औजारों का विकास।

3 वृक्ष, वनस्पतियों के गुण, उनके खाद्य, अखाद्य गुणों का ज्ञान।

4 पषु पालन का ज्ञान।

5 सामुदायिक जीवन, सामूहिक नृत्य, गान, संगीत आदि।

6 सादा सरल प्रकृति से समरस जीवन।

आरण्यक संस्कृति की सर्वोत्तम कृति वेद और उपनिषद हैं। इस संस्कृति में सबसे महत्वपूर्ण

शब्द–ब्रह्म
ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 सितंबर 2015
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

घटना कृषि की खोज है। इसने आरण्यक जीवन में क्रांतिकारी परिवर्तन कर दिया। इससे एक नयी सभ्यता का उदय हुआ। इसे कृषि संस्कृति कहा गया। इसने पोषण के साधनों में, उत्पादन के साधनों में बुनियादी परिवर्तन कर दिया। कृषि की खोज ने मानव जीवन में नये मूल्य दाखिल किए। इसने मानवीय संबंधों में भी परिवर्तन कर दिया। वर्ण व्यवस्था और पंचायत व्यवस्था विकसित हुई। अर्थषास्त्र की दृष्टि से वर्णव्यवस्था का अत्यधिक महत्व था। यह स्पर्धा रहित व्यवस्था थी, जिसमें सभी को पूर्ण संरक्षण प्राप्त था। सभी वर्ण परस्पर आश्रित थे, उनमें पूर्ण समानता थी और अस्पृष्यता नहीं थी। यह स्वावलंबी व्यवस्था थी। इस व्यवस्था में भी उत्पादन आधिक्य और अभाव के प्रष्न उपस्थित होते थे। भोजन के बदले श्रम की व्यवस्था थी। बाद में इसने बेगार का रूप ले लिया। व्यापार में वस्तु विनिमय माध्यम की खोज हुई। यहां से वस्तुओं के मूल्य मापन का प्रष्न उपस्थित हुआ। मूल्य का निर्धारण किन सिद्धांतों पर किया जाए, यह प्रष्न भी आया। मूल्य निर्धारण के लिए पहले नैतिकता को ही आधार माना गया। पहले के विचारकों और लेखकों ने आर्थिक व्यवहार के लिए अलग से सिद्धांत नहीं बनाए और न ही स्वतंत्र ग्रंथ की रचना की। कृषि संस्कृति में व्यापार का विकास हुआ और इसे समृद्धि का आधार माना गया। मनुष्य की आवष्यकताओं में निरंतर विकास होता गया। ग्राम स्वावलंबन का विकास परावलंबन में हुआ और अंततः इसी में से व्यापारवाद का भी विकास हुआ।

पश्चिम का अर्थशास्त्र

पष्चिम के अर्थशास्त्रियों में संत एविनास (1225-1275), मार्टिन लूथर (1483-1546), जीन बोडिन, थामस मून, पी.डब्ल्यू. हार्निक का साहित्य उल्लेखनीय है। बेंजामिन फ्रेंकलिन ने मूल्य निर्धारण के लिए नये सिद्धांतों का प्रतिपादन किया। कालांतर में कृषि संस्कृति का विकास व्यापारिक संस्कृति में हो गया। इस व्यापारिक संस्कृति में से ही औद्योगिक संस्कृति की उत्पत्ति हुई। औद्योगिक संस्कृति ने मानव जीवन के मूलभूत जीवन मूल्यों,रहन-सहन, खान-पान, षिक्षा-चिकित्सा, मनोरंजन, उत्पादन पद्धति, व्यापार पद्धति, विनिमय पद्धति, राज्य पद्धति, टेक्नालाॅजी, साहित्य, कला सभी क्षेत्रों में क्रांति कर एक नयी संस्कृति की स्थापना की। यद्यपि इसकी समयावधि कम है, परंतु औद्योगिक संस्कृति का मनुष्य जीवन पर जबर्दस्त प्रभाव हुआ। औद्योगिक क्रांति ने नगर विकसित किए और नगरीकरण की प्रक्रिया प्रारंभ हुई। आज उद्योग, व्यापार, षिक्षा, चिकित्सा, कला, संस्कृति, राजनीति, दूरसंचार, परिवहन प्रणाली आदि सभी के केंद्र नगर हैं और उसके आसपास ही सारे गांव, खेती, पषुपालन आदि घूम रहे हैं। ग्राम जीवन तो लगभग समाप्त हो रहा है।

यद्यपि औद्योगिक संस्कृति ने मानवता को उत्पादन की उन्नत बेहतर पद्धतियां, आकर्षक वस्त्र, सुविधायुक्त आवास, सार्वजनिक शिक्षा, आरोग्य और चिकित्सा के आधुनिक साधन, खेल मनोरंजन के विविध साधन, काम के अच्छे औजार, संचार परिवहन के तीव्र साधन, रेडियो, टेलीफोन, टेलीविजन, कम्प्यूटर आदि प्रदान किए हैं, परंतु इसी सभ्यता ने भयानक शोषण, हिंसा, गुलामी, नस्लवाद, उपनिवेषवाद, साम्राज्यवाद, सम्प्रदायवाद, आतंकवाद, युद्ध-महायुद्ध जैसी बुराइंया भी उत्पन्न की हैं। विकास और विकास दर बढ़ाने की स्पर्धा ने वनों का विनाश किया, भूमि, जल, वायु और आकाष को नष्ट होने की सीमा तक प्रदूषित किया है। सारे समाज का

शब्द–ब्रह्म
ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 सितंबर 2015
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

शस्त्रीकरण, सैनिकीकरण और अपराधीकरण भी हुआ है। प्रदूषित वातावरण ने और स्वच्छंद जीवन ने कैंसर और एड्स जैसे रोग भी फैलाए हैं। नषाखोरी ने नींद हराम कर रखी है। इस सबसे ऐसा लगता है कि क्या इस औद्योगिक संस्कृति को अपनी संपूर्ण उपलब्धियों के साथ कायम रखा जा सकता है ? क्या यह समाज एक स्थायी समाज रह सकता है ?

आधुनिक अर्थशास्त्रियों में एडम स्मिथ, माल्थस, डेविड रिकार्डो, जाॅन स्टुअर्ट मिल, हेनरी जार्ज, कार्लमार्क्स, प्रिंस क्रापटकिन, हाब्सन, आगस्ट काम्टे, मार्शल, संत सायमन, वेब्लेन, जे.एम.कीन्स, गालब्रेथ, गुन्नरा मिर्डल आदि ने औद्योगिक सभ्यता से संबंधित इन्हीं प्रश्नों पर गहराई से चिंतन किया और अनेक सिद्धांतों का प्रतिपादन किया। आधुनिक अर्थशास्त्रियों के चिंतन पर विज्ञान के विकास का भी बहुत प्रभाव हुआ। इसलिए वे न केवल वस्तु स्थिति का वर्णन करते हैं, बल्कि इसे बदलने का विष्लेषण भी प्रस्तुत करते हैं।

औद्योगिक संस्कृति और सर्वोदय विचार

औद्योगिक क्रांति से प्रारंभिक वर्षों में क्रांति की उपलब्धियों को सारे समाज में प्रसारित करने पर ज्यादा जोर रहा। औद्योगीकरण के रास्ते में आने वाली बाधाओं को हटाने पर सारा ध्यान केंद्रित किया। जब यह देखा कि औद्योगीकरण अपने साथ में विकृतियां भी ला रहा है तो उनके निराकरण पर भी जोर दिया गया। महात्मा गांधी के पदार्पण तक औद्योगीकरण सर्वमान्य हो गया था। सारे सुधारकों का जोर उसके दोषों के निवारण पर ही था। औद्योगीकरण ही सबसे बड़ा दोष है और सब दोषों का मूल कारण है, इसकी अनुभूति सबसे पहले गांधीजी को हुई। स्वराज्य के पहले भारत में दो प्रसिद्ध अर्थषास्त्री हुए दादाभाई नौरोजी और डा.जे.सी.कुमारप्पा। दादाभाई नौरोजी ने 'पावर्टी इन अनब्रिटिश रूल इन इंडिया' नामक ग्रंथ लिखा। कुमारप्पा जी ने 'सार्वजनिक वित्त व्यवस्था और हमारा दारिद्र्य' विषय पर शोध ग्रंथ लिखा। अपने आर्थिक विचारों को प्रकट करने के लिए उन्होंने दो ग्रंथ लिखे गांव आंदोलन क्यों ? और स्थायी समाज व्यवस्था। दूसरी ओर आर्थिक नीतियों को लागू करने के संबंध में गांधी-नेहरू मतभेद जगजाहिर है। डाॅ.राममनोहर लोहिया ने भाव बांधने पर विषेष जोर दिया। उन्होंने उद्योगों में व्यक्तिगत स्वामित्व के स्थान पर ट्रस्टीषिप लागू करने के लिए एक विधेयक भी संसद में प्रस्तुत किया। लोकनायक जयप्रकाष नारायण प्रखर समाजवादी विचारक थे। पहले वे माक्र्सवादी थे, परंतु बाद में विनोबा के भूदान यज्ञ आंदोलन में सम्मिलित हो गए और भूमि वितरण के काम में लगे। अंत में उन्होंने संपूर्ण क्रांति का विचार दिया और जनआंदोलन का नेतृत्व किया।

आज स्थिति यह है कि विष्व में औद्योगिक देश दुनिया के विकासशील और अर्धविकसित देशों में अपने उत्पादन के लिए बाजार खोज रहे हैं। उन्होंने अर्थव्यवस्था का विश्वव्यापीकरण कर दुनिया को उदारीकरण, निजीकरण और मुक्त बाजार का क्षेत्र बना दिया है। वे अपनी समृद्धि को जैसे-तैसे टिकाए रखना चाहते हैं। दूसरी ओर विकासषील और अल्पविकसित देषों में चेतना तेजी से बढ़ रही है। वे राष्ट्रीय स्वावलंबन की प्रेरणा से अपने आर्थिक संगठनों को मजबूत करने में लगे हैं। विकसित देषों में अनेक कारणों से असंतोष है। समृद्धि की अपनी समस्याएं हैं जो ज्यादा गंभीर हैं। इसलिए सारे विष्व में नये विचार के लिए नयी संस्कृति की आकांक्षा उत्पन्न हुई है। वस्तुतः इस नयी संस्कृति का

शब्द–ब्रह्म
ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 सितंबर 2015
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

सूत्रपात भारत में गांधी विचार, सर्वोदय विचार के रूप में हुआ है।

औद्योगिक संस्कृति में जो आर्थिक सिद्धांत विकसित हुए वे अंतर्विरोधों से भरे हुए हैं और अस्थिर हैं। भारत में गांधी के नेतृत्व में अहिंसक क्रांति हुई, जिसका असर सारे विष्व पर हुआ। यद्यपि गांधीजी सामान्य अर्थ में अर्थशास्त्री नहीं थे, लेकिन ऐसे दार्शनिक थे जिन्होंने जीवन के हर पहलू पर अपने विचार प्रकट किए। उन्होंने इसे सर्वोदय संस्कृति नाम दिया है।

गांधीजी ने सुप्रसिद्ध आध्यात्मिक अर्थषास्त्री जान रस्किन की पुस्तक अनटू दिस लास्ट का भावानुवाद किया और इस पुस्तक को नाम दिया 'सर्वोदय'। रस्किन की पुस्तक का आधार बाइबिल की कहानी थी। पुस्तक को पढ़ने के बाद गांधीजी ने अपना बेरिस्टरी का जीवन त्याग दिया और सेवा का जीवन अपना लिया। यूरोप में कार्लाइल, रस्किन और रूस के टाल्सटाय ने पैसे की बाजार वाली अर्थव्यवस्था पर तीखे प्रहार किए। धन के शास्त्र के रूप में अर्थषास्त्र का जो विकास हो रहा था, उसमें ये तत्वज्ञानी चिंतित थे और इसके खिलाफ अनेक ग्रंथ और लेख लिखे। रस्किन की पुस्तक में जो मुख्य तत्व थे उसे गांधीजी ने इस भाषा में रखा 1 सबके भले में अपना भला अर्थात समाज के भले में ही व्यक्ति का भला है, 2 वकील, नाई, भंगी और प्रोफेसर के काम की कीमत एक-सी होनी चाहिए क्योंकि आजीविका का हक समान है, 3 मजदूर और किसान का जीवन ही सच्चा जीवन है। ये तीन सर्वोदय विचार के बुनियादी सिद्धांत हैं। उन्होंने इनके आधार पर अपने जीवन में प्रयोग किए। आर्थिक सिद्धांतों की दृष्टि से गांधीजी द्वारा प्रवर्तित निम्नांकित रचनात्मक कार्यक्रमों का उल्लेख आवश्यक है:

1 खादी तथा ग्रामोद्योग आंदोलन

2 मजदूर-महाजन संस्था का विचार

3 गोसेवा

4 ट्रस्टीशिप

5 सत्याग्रह

भारत के गांवो में गरीब से गरीब व्यक्ति और बेसहारा महिलाओं की तत्काल सहायता हो और ग्रामों में स्वावलंबन वृत्ति भी जाग्रत हो, इसके लिए उन्होंने खादी ग्रामोद्योग का कार्यक्रम शुरू किया। इसके द्वारा उन्होंने लोगों में ग्रामभावना, स्वदेषी भावना, गरीबों के लिए त्याग भावना उत्पन्न की और खादी ग्रामोद्योग का अहिंसक अर्थषास्त्र, शोषण विहीन और प्रदूषण रहित तकनीक का प्रवर्तन किया। इस प्रकार उपभोग, उत्पादन, विनिमय, वितरण का समन्वित चित्र भी प्रस्तुत किया। अखिल भारत चरखा संघ और ग्रामोद्योग संघ के गठन और संचालन से गांधी जी ने यह सिद्ध कर दिया कि गरीबों की प्रेरणा से ऐसा संगठन चल सकता है जिसके लोगों में लाभ कमाने की प्रेरणा का अभाव हो। अर्थात बिना लाभ-हानि के भी व्यापारिक और औद्योगिक गतिविधियां चलायी जा सकती हैं। इस प्रकार गांधीजी ने ऐसे अर्थषास्त्र की नींव रखी जो प्रचलित औद्योगिक व्यावसायिक बाजार व्यवस्था से भिन्न स्वतंत्र अर्थव्यवस्था है।

वर्तमान में केंद्रित उद्योगों के मालिक भी हैं और मजदूर भी। ऐसी मान्यता थी कि इन दोनों वर्गों में हित विरोध है। इसके आधार पर माक्र्स ने वर्ग-संघर्ष की कल्पना भी रखी। लेकिन गांधीजी ने इससे सर्वथा भिन्न विचार रखा और सिद्ध किया कि मालिक, मजदूर, महाजन ये सभी एक समाज के घटक हैं, एक-दूसरे के पूरक हैं, पोषक हैं

शब्द–ब्रह्म
ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 सितंबर 2015
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

और सहायक हैं। इनके हित आपस में जुड़े हुए हैं और विरोध जैसा कुछ भी नहीं है। उद्योग के हित में ही मजदूर मालिक दोनों का हित है। इस आधार पर गांधीजी ने अहमदाबाद में मजदूर महाजन संस्था का गठन और संचालन भी किया।

इस विचार को आगे बढ़ाकर गांधीजी ने अर्थषास्त्र के लिए 'ट्रस्टीशिप' का विचार दिया। ट्रस्टीशिप का विचार सारे विश्व को गांधीजी की अनुपम देन है। ट्रस्टीशिप में स्वामित्व के विसर्जन की कल्पना है, भले ही वह व्यक्ति का हो, समूह का हो, संस्था का हो, संगठन का हो, राज्य का हो। वे मनुष्य शरीर के सारे शारीरिक, बौद्धिक गुणों की भी मालकियत स्वीकार नहीं करते थे। मनुष्य अपने शरीर का और इन सब गुणों का मालिक नहीं वरन् ट्रस्टी है।

इन गुणों से प्राप्त धन, संपत्ति आदि का भी अपनेको स्वामी न मानकर उतने ही भोग का अधिकारी है, जितना उस शरीर या उस गुण की रक्षा करने के लिए अनिवार्य हो या समाज जितने उपभोग की इजाजत दे। इसी प्रकार जिस व्यक्ति के पास जो कुछ भी वस्तु, पद, प्रतिष्ठा, सत्ता, संपत्ति हो उसका भी वह ट्रस्टी है, क्योंकि उसे इन सबका व्यापक समाज और सृष्टि के हित में उपयोग करने के लिए अधिकृत किया गया है। उसे इन सबका स्वयं के हित में उपयोग करने का नैतिक अधिकार नहीं है। वह समाज की या हिताधिकारियों की अनुमति से अपनी इस सेवा या समुचित कमीषन पाने का हकदार अवश्य है। इस प्रकार गांधीजी का ट्रस्टीशिप का विचार राजकीय स्वामित्व या सामाजिक स्वामित्व से बहुत आगे बढ़ा हुआ और इससे बहुत भिन्न विचार है।

महात्मा गांधी और ट्रस्टीशिप

गांधीजी के ट्रस्टीशिप के निम्नांकित मूलतत्व हैं:

1 मानव के अस्तित्व का मुख्य उद्देष्य धन संपत्ति नहीं है। और न कुछ सामाजिक कर्तव्यों की पूर्ति मात्र है वरन् आध्यात्मिक विकास है।

2 जीवन में संपत्ति का एक स्थान अवष्य है, लेकिन उसका मालिक और भोग के अधिकार से कोई संबंध नहीं है।

3 संपत्ति रखने का उद्देष्य संग्रह वृत्ति के संतोष के लिए न होकर, मानवीय सुख और व्यक्ति का विकास हो।

4 धन संपत्ति की तरह ही मनुष्य का कोई शारीरिक या बौद्धिक गुण हो सकता है। इसे भी वह ईष्वर या प्रकृति प्रदत्ता माने और समाज से उसे यह गुण मिला है। यह भावना रखकर समाज के कल्याण के लिए ट्रस्टी की तरह अपने गुण और शक्ति का उपयोग करे।

यदि कोई स्वेच्छा से ट्रस्टी न बने तो ? इस प्रश्न के उत्तर में से ही 'सत्याग्रह' का विचार निकला है। यदि कोई मनुष्य ट्रस्टी जैसा व्यवहार नहीं करता और हिताधिकारियों के हित के खिलाफ या विरुद्ध धन, संपत्ति का उपभोग करता है तो असहयोग और सविनय अवज्ञा द्वारा सत्याग्रह द्वारा उसके ऐसे व्यवहार को ठीक किया जा सकता है। आवश्यक होने पर सत्याग्रह द्वारा उन्हें ट्रस्टी के पद से हटाया भी जा सकता है। गांधीजी पहले अंग्रेजों को भारत का ट्रस्टी मानते थे, क्योंकि अंग्रेज अपने को ऐसा ही कहते थे। लेकिन जब उन्होंने इस विष्वास को भंग किया तब गांधीजी ने सत्याग्रह द्वारा उन्हें ट्रस्टीशिप से हटाने का आंदोलन चलाया। ऐसे ही सत्याग्रह की कल्पना भूमि, धन, संपत्ति आदि के मालिकों के संबंध में की जा सकती है।

शब्द–ब्रह्म
ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 सितंबर 2015
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

गांधीजी के इन विचारों पर विष्व के अनेक विचारकों ने चिंतन किया जैसे इंग्लैंड के शूमाखर, अमेरिका में रिचर्ड ग्रेग, विल्फ्रेड बेलाक, होरेल एलेक्जेंडर, फ्रिट ज्याफ काप्रा, एल्विन टाॅफ्लर, एरिक फ्राम आदि। भारत में विनोबा।

भूमि समस्या और समाधान

उत्पादन के लिए पांच तत्व की जरूरत होती है: 1 भूमि, 2 श्रम, 3 पूंजी, 4 संगठन, 5 साहस। भूमि उत्पादन का अनिवार्य साधन है। वेद में इसे माता कहा गया है मातः भूमिः पुत्रोहं पृथिव्याः। भूमि हमारी माता है और हम उसके पुत्र हैं। व्यावसायिक विकास के प्रारंभिक वर्षो में भूमि, खरीद-बिक्री की चीज नहीं थी। भूमि के व्यक्तिगत स्वामित्व के विकास के साथ ही खरीद बिक्री का तत्व उसमें दाखिल हो गया। भूमि का सारा नियंत्रण राजा के हाथ में था। किसान यदि जमीन नहीं जोत सकता था, तो उसे वापस राज्य को सौंप देता था। राजा उसे दूसरे किसान को दे देता था। व्यावसायिकता में वृद्धि होने के साथ भूमि का महत्व दिनोंदिन बढ़ गया। दुनिया में क्रांतियों का प्रमुख कारण भूमि का स्वामित्व रहा है। भूमि पर किसका स्वामित्व हो ? दूर से नियंत्रण करने वाले सम्राट का, महाराजा का, राजा, जमींदार, जागीरदार का हो या खेती करने वालो किसानों का हो ? भारत में आजादी आंदोलन में यह तथ्य स्पष्ट हो गया कि हमारी गरीबी का सबसे बड़ा कारण अंग्रेजी राज है, इसलिए अंग्रेजी राज हटाने पर सभी ने जोर दिया। धीरे-धीरे यह भी स्पष्ट हो गया कि यह देष कृषि प्रधान है और जमीन का स्वामित्व यदि राजा, महाराजा, जमींदार, जागीरदार और मालगुजारों के पास रहता है तो किसानों का शोषण जारी रहेगा। उत्पादन में वृद्धि नहीं होगी और गरीबी भी नहीं मिटेगी। स्वराज्य मिलते ही राजाओं के राज्यों को भारत संघ में विलय कर दिया गया। जमींदार, जागीरदारी, मालगुजारी समाप्त कर दी गई। लेकिन अनेक राजा, जमींदार, जागीरदार, मालगुजार सब तुरंत किसान बन गए और अपने नियंत्रण की भूमि के बड़े-बड़े भूखण्ड खुद काष्त के अंतर्गत आ गए। यूरोप, अमेरिका जैसे देषों में औद्योगिक क्रांति के बाद खेती में यंत्रीकरण हुआ और खेत मजदूरों के स्थान पर यंत्र आ गए। रूस में क्रांति के बाद खेती का राष्ट्रीयकरण हो गया। जापान में जनरल मेकार्थर ने जागीरदारी प्रथा समाप्त कर भूमि सुधार लागू किए और भूमि की सीमा अधिकतम दो हैक्टेयर का कानून लागू किया। चीन में क्रांति हुई और भूमि का निजी स्वामित्व समाप्त कर गांव की सारी भूमि कम्यून बना दी गई। लेकिन भारत में जमींदार, जागीरदारी समाप्त होने पर भी किसानों और मजूदरों को जमीन नहीं मिली। इस कारण गांवों में निराषा फैली और हिंसा में वृद्धि हुई। इस परिस्थिति से साम्यवादी लाभ उठाना चाहते थे। गांधी विचारक इस प्रष्न को अहिंसा से हल करना चाहते थे। साम्यवादी क्रांतिकारियों ने आंध्रप्रदेषके तेलंगाना को अपना कार्यक्षेत्र बनाया और हिंसक क्रांति द्वारा उस क्षेत्र को मुक्त क्षेत्र जैसा बनाने का प्रयत्न किया।

भूदान-ग्रामदान और मालकियत विसर्जन

गांधीजी के आध्यात्मिक उत्तराधिकारी विनोबा भी उस क्षेत्र में शांति और अहिंसक क्रांति की खोज में गए। हिंसा और अषांति का मूल कारण तो भूमि है। यदि खेतीहर बेजमीन मजदूरों को जमीन मिल जाए तो इस प्रष्न का समाधान हो सकता है। विनोबा ने अपनी सभा में गरीबों के लिए जमीन वालों से जमीन की मांग की और 18 अप्रैल 1951 को रामचंद्र रेड्डी ने अपनी 100

शब्द–ब्रह्म
ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 सितंबर 2015
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

एकड़ जमीन गांव के भूमिहीनों को दान में देने का संकल्प जाहिर किया। विनोबा ने इससे प्रेरणा लेकर जमीन मांगना प्रारंभ किया। विनोबा ने इसे भूदान यज्ञ कहा। उन्होंने गांव-गांव में पदयात्रा की। कुछ ही दिनों में उन्हें सैकड़ों एकड़ जमीन दान में मिली। सारे तेलंगाना पर इसका अच्छा प्रभाव हुआ, हिंसा समाप्त हो गई और साम्यवाद का सारा आंदोलन ठप पड़ गया। जिस समस्या के समाधान के लिए महाभारत का युद्ध हुआ, रूस और चीन में हिंसक क्रांतियां हुईं, जापान को विदेषी दासता भोगनी पड़ी, वहीं भारत ने इस समस्या का समाधान अहिंसक तरीके से किया।

विनोबा जी ने भूदान आंदोलन के दौरान पूरे भारत की पदयात्रा की। उन्हें परिस्थिति की गंभीरता का अहसास हुआ। इसलिए उन्होंने इस समस्या के हल के लिए एक नया तरीका निकाला वह था 'ग्रामदान।'

इसकी चार शर्तें हैं:

1 गांव के सब लोग मिलकर ग्रामसभा का निर्माण करेंगे। गांव के सब वयस्क इसके सदस्य होंगे। ग्रामसभा अपने निर्णय सर्वसम्मति से या सर्वानुमति से करेगी।

2 जमीन का कब्जा काश्त का अधिकार और विरासत का अधिकार किसान का ही रहेगा लेकिन जमीन का स्वामित्व ग्रामसभा का होगा।

3 गांव के सभी किसान अपनी पैदावार का ढाई प्रतिशत मजदूर, व्यापारी, वेतनभोगी लोग अपनी आय का तीसवां हिस्सा 'ग्राम कोष' में देंगे। इस ग्राम कोष से विकास और कल्याण के कार्य किए जाएंगे।

4 गांव के सब किसान अपनी जमीन का बीसवां हिस्सा अर्थात 5 प्रतिशत भूमिहीन श्रमिक को देंगे।

इस प्रकार विनोबा ने भूमि के स्वामित्व विसर्जन का एक क्रांतिकारी कार्यक्रम शुरू किया। भूदान में भूमिवान अपनी जमीन का एक हिस्सा भूमिहीन श्रमिकों को देते थे। लेकिन ग्रामदान में भूमि का स्वामित्व ग्रामसभा में निहित है। 31 मार्च 1972 तक देश में 1 लाख 68 हजार 108 ग्रामदान प्राप्त हुए।

भूदान-ग्रामदान आंदोलन के बाद भी प्रश्न यह है कि क्या इससे देश की भूमि का समस्या का समाधान हुआ ? क्या समस्या हल हुई ? इसका उत्तर नकारत्मक है। केवल इससे इतना ही पता चलता है कि भूमि समस्या का समाधान मानवीय अहिंसक पद्धति से भी किया जा सकता है।

विनोबा को यह भलीभांति जानकारी थी कि यदि भूमि समस्या हल नहीं हुई तो देश में अशांति बढ़ेगी। वे कहते हैं, ''मैं जहां-जहां गया, वहां जो देखा, उस पर से एक वस्तु साफ दिखायी दी कि हिंदुस्तान के गरीब लोगों की हालत बिगड़ती ही जा रही है। स्वराज्य मिलने के बाद भी उनको राहत नहीं मिल रही है। देश में अगर शांति चाहते हैं तो उनके लिए फौरन हमें कुछ करना चाहिए। अहिंसक समाज रचना हम करना चाहते हैं, तो अपरिग्रह का ख्याल रखना चाहिए। यानी जिनके पास संपत्ति है, उन्हें सच्चे अर्थ में उसके ट्रस्टी बनना चाहिए, तभी अहिंसा का दर्शन होगा। नहीं तो उत्तरोत्तर अशांति बढ़ती जाएगी। उसके आसार भी दिखाई दे रहे हैं।''

विनोबा ने अनेक बार इस ओर ध्यान आकर्षित किया कि विज्ञान के जमाने में व्यक्तिगत मालकियत नहीं टिकेगी। उन्होंने कहा कि, ''व्यक्तिगत जीवन में जो स्थिति श्वास की है, सामाजिक जीवन में वही विश्वास की है। जिस तरह श्वास के अभाव में व्यक्ति मर जाता है,

शब्द–ब्रह्म
ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 सितंबर 2015
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

उसी तरह हमें समझना चाहिए कि जब सामाजिक जीवन की इकाइयों में परस्पर विश्वास नहीं रह जाता, तो समाज मृतप्राय-सा हो जाता है। विश्वास, यानी विस्तृत, व्यापक श्वास, कुल जनता का श्वास। भारत में महाजनों के और आम लोगों के बीच विश्वास उत्पन्न होना चाहिए।''

''सारी जायदाद सार्वजनिक मानी जानी चाहिए और उसकी व्यवस्था के बारे में कुछ नियम होने चाहिए। अगर ट्रस्टी इन नियमों के अनुसार जायदाद की देखभाल न करें, तो उनकी ट्रस्टीशिप रद्द कर देने का अधिकार जनता को होना चाहिए। जिनके पास संपत्ति है, वे यदि इस संपत्ति का उपयोग सार्वजनिक काम के लिए नहीं करते हैं, तो उनके पास से यह धन-दौलत छीन ली जाए। इस छीन लेने की प्रक्रिया में हिंसा की जगह न हो।''

''सर्वोदय समाज के लिए दो-तीन चीजें करनी हैं। पहली हमारे पास जो चीजें हैं, उनके हम मालिक नहीं ट्रस्टी हैं। ऐसी भावना चाहिए। मेरा खेत, मकान या फैक्टरी हो, मैं उसका मालिक नहीं। मनुष्य के जीवन का उद्देश्य है न्यास यानी समाज में लीन हो जाना, व्यक्तिगत मालिकी मिटाकर समूह की शरण लेना।

आज विश्व में जिन कारणों से अशांति है, उनमें से एक कारण है कि हर मनुष्य अपना संकुचित स्वार्थ सोचता है और अपनी मालिकी बनाकर रहता है। यह मेरा घर, मेरा खेत, मेरा धन, इस तरह मेरा-मेरा करता है, इसलिए दूसरे के साथ टकराहट होती है। जमीन की मालिकी आज दुःखों के मूल में है।

''मनुष्य मालिकी इसलिए चाहता है कि वह दूसरों के परिश्रम से जीना चाहता है। दूसरे श्रम करें, उसका ज्यादा से ज्यादा लाभ मुझे मिले, क्योंकि मैं मालिक हूं। स्वयं शरीर परिश्रम टालना और दूसरों के श्रम का लाभ उठाना, यह दुनिया के दुःखों का कारण है। जो लोग मालिकों से द्वेष करते हैं, वे खुद मालिकी चाहते हैं। मालिकी बड़ी-बड़ी मालिकी छोड़ने को तैयार नहीं, तो ये छोटी-छोटी मालिकी छोड़ने को तैयार नहीं। छोटे मालिक बड़े मालिकों से द्वेष करते हैं, लेकिन स्वयं छोटी मालिकी से चिपके रहते हैं।''

भारत में मालिकी हरगिज नहीं टिक सकती, क्योंकि यहां उस पर दोनों ओर से हमले हो रहे हैं। भारतीय आत्मा को व्यापक मानते हैं और जो लोग आत्मा को मानते हैं, वे मालिकी नहीं टिका सकते। इस तरह यहां एक ओर से मालिकी पर अध्यात्म विद्या का प्रहार हो रहा है, तो दूसरी ओर वैज्ञानिक युग का प्रहार हो रहा है। भूमि समस्या हल हुए बिना दूसरी योजनाओं से गरीबों का शोषण ही होने वाला है। भारत में और दुनिया में ट्रस्टीशिप के अनेक उदाहरण मिल सकते हैं। संयुक्त परिवार व्यवस्था में इस सिद्धांत का कुछ व्यवहार होता है। भारत में अहिल्याबाई होलकर जैसी रानी, भामाशाह जैसे साहूकार और जमनालाल बजाज जैसे उदाहरण मौजूद हैं। गांधीजी इन अनुभवों पर से समाज व्यवस्था और अर्थव्यवस्था में बुनियादी परिवर्तन करना चाहते थे।

सन् 1945 में सुप्रसिद्ध अर्थशास्त्री श्री दातवाला, श्री किशार लाल मश्रूवाला और श्री नरहरि पारीख ने महात्मा गांधी के ट्रस्टीशिप सिद्धांत की व्यावहारिक व्याख्या की। इसमें स्वयं महात्मा गांधी ने कुछ संशोधन किए। यह व्याख्या इस प्रकार थी:

1 ट्रस्टीशिप वर्तमान पूंजीवादी व्यवस्था को समानतावादी व्यवस्था में बदल देने का एक

शब्द–ब्रह्म
ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 सितंबर 2015
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

साधन मुहैया कराती है। यह पूंजीवाद को कोई प्रश्रय नहीं देती, बल्कि मौजूदा मालिक वर्ग को अपने सुधार का मौका देती है। उसका आधार यह श्रद्धा है कि मानव स्वभाव कभी सुधार से परे नहीं है।

2 समाज स्वयं अपनी भलाई के लिए जितनी इजाजत दे उससे अधिक ट्रस्टीशिप संपत्ति के निजी स्वामित्व का कोई अधिकार स्वीकार नहीं करती।

3 वह संपत्ति के स्वामित्व और उपयोग का नियमन करने के लिए कानून का निषेध नहीं करती।

4 इस प्रकार राज्य द्वारा नियमन ट्रस्टीशिप में कोई अपने स्वार्थपूर्ण संतोष के लिए अथवा समाज के हित की परवाह न करके अपनी संपत्ति रखने या काम में लाने को स्वतंत्र नहीं होगा।

5 जैसे उचित अल्पतम जीवन वेतन निश्चित करने का प्रस्ताव है वैसे ही समाज मेंे किसी मनुष्य की अधिक से अधिक आय कितनी हो, इसकी मर्यादा भी तय होनी चाहिए। इस कम से कम और ज्यादा से ज्यादा आमदनी के बीच का अंतर उचित न्याय संगत और समय-समय पर बदलने वाला होना चाहिए। और वह इस तरह से कि प्रवृत्ति उस अंतर को मिटाने की रहे।

6 गांधीवादी अर्थव्यवस्था में उत्पादन का स्वरूप समाज की जरूरत के अनुसार निश्चित होना चाहिए न कि व्यक्ति की सनक या मरजी या लालच से।''

व्यक्तिगत मालकियत विसर्जन और परिवार

आदिशंकराचार्य ने धन-संपत्ति पर अपना चिंतन प्रस्तुत करते हुए कहा है, 'अर्थ अनर्थ का कारण है। इसमें तनिक भी सुख नहीं है। एक पिता को अपने पुत्र से भय लगता है कि कहीं यह संपत्ति न हड़प ले। आठवीं सदी में कही गई उनकी बात के कई उदाहरण हमें देखने को मिलते हैं। आज की सभ्यता का सबसे बड़ा संकट व्यक्तिगत मालकियत का है। इसने कर्तव्यपालन को तिलांजलि देकर अधिकार अथवा हक के विचार को स्थापित किया है। पूंजीवादी सभ्यता से फले-फूले बाजारवाद ने पूरी दुनिया को अपनी गिरफ्त में ले लिया है। बीच में कुछ समय के लिए कार्लमार्क्स के विचारों ने दुनिया को पूंजीवाद से मुक्त करने के लिए हलचल पैदा की, परंतु पूंजीवाद की प्रतिक्रिया में उपजा यह विचार कालांतर में वाद में परिवर्तित हो गया। विकसित देशों में व्यक्तिगत मालकियत को बहुत अधिक प्रतिष्ठा प्राप्त है। वहां के सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक इत्यादि समस्त क्षेत्रों में अर्थ का प्रभुत्व है। इसलिए वहां अनेक पैमानों पर धनवानों की संपत्ति का आकलन करके उसे अंतर्राष्ट्रीय पत्रिकाओं में प्रकाषित किया जाता है। दुनियाभर के सत्ता प्रतिष्ठान, न्यायपालिका और कार्यपालिका आमजन की आधारभूत समस्याओं को हल करने में नाकाम साबित हो रहे हैं। इससे पनपने वाले विद्रोह और आतंक ने परिवार से लेकर राष्ट्रों तक को अषांति के गर्त में ढकेल दिया है। महात्मा गांधी ने अपने जीवनकाल में पश्चिमी सभ्यता की समस्याओं को बहुत नजदीक से देखा था और उन्होंने इसका हल ट्रस्टीषिप अथवा संरक्षकता के सिद्धांत में सुझाया था। इसी विचार को विनोबा ने आगे बढ़ाते हुए मालकियत विसर्जन में रूपांतरित किया। भूदान आंदोलन की अंतिम परिणति तो मालकियत भाव मिटाने की है। इस आंदोलन में कम भूमिधारकों ने भी अपनी हैसियत के अनुसार दान दिया। महाभारतकाल में भगवान श्रीकृष्ण को दुर्योधन ने यह कहकर लौटा दिया था कि सुई की नोंक के

शब्द–ब्रह्म
ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 सितंबर 2015
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

बराबर भी जमीन नहीं मिलेगी, वहीं भूदान में 45 लाख एकड़ जमीन दान में मिली। टाल्सटाय ने भी अपने चिंतन में सुखी समाज के लिए मालकियत विसर्जन को मान्य किया।

आज भारतीय समाज को मालकियत विसर्जन के विचार की अत्यधिक आवष्यकता है। बाजार अपने विस्तार के लिए सबसे पहले स्थायी संपत्ति की तलाष करता है। उसकी नजरें हमेषा भूमि-भवन को देखती रहती हैं। अपनी जरूरतों की पूर्ति के लिए वह नैतिक-अनैतिक सभी तरह के हथकंडे इस्तेमाल करता है। बाजार के पास इतनी शक्तियां हैं कि वह पूरी दुनिया को अपनी ऊंगलियों पर मनचाहा नाच नचा रहा है। मालकियत विसर्जन में भोगवादी संस्कृति के खिलाफ सत्याग्रह की कुंजी छिपी है। इस कुंजी से संपत्ति को लेकर व्याप्त मोह के ताले को खोला जा सकता है। इसकी शुरुआत परिवार से होगी तो इस भावना का विस्तार ग्राम, जिले, राज्य, देश और दुनिया तक होगा।

भारतीय समाज में भोगवादी संस्कृति का विस्तार होने से वृद्धों की स्थिति अत्यंत दयनीय हो गई है। उनके द्वारा पुरुषार्थ से अर्जित की गई संपत्ति पर परिवार के सदस्य दृष्टि गढ़ाये रहते हैं। इसे लेकर अनेक बार अप्रिय वार्तालाप और उससे आगे जाकर अप्रिय कृत्य के समाचार प्रकाषित होते रहते हैं। वृद्धावस्था में असुरक्षा की भावना तीव्र हो जाती है। इससे उन्हें अपनी संपत्ति का मोह भी बढ़ जाता है। उनके मोह और पारिवारिक सदस्यों के लोभ से कलह पैदा होकर अषांति फैलती है। वृद्धाश्रम की बढ़ती संख्या इसी कलह का परिणाम है। जीवन के उत्तरार्ध में हरिभजन करने के स्थान पर वृद्धों को कोर्ट-कचहरियों की सीढ़ियां चढ़ते-उतरते देखा जा सकता है। देष की अदालतों में लंबित दीवानी मुकदमों में सर्वाधिक मुकदमे संपत्ति विवाद के हैं। महात्मा गांधी के ट्रस्टीषिप और विनोबा के मालकियत विसर्जन के विचार में इसका हल निहित है। यदि वृद्ध अपने पुरुषार्थ द्वारा अर्जित संपत्ति को व्यक्तिगत ट्रस्ट में परिवर्तित कर दें तो इससे मोह भी छूटेगा और पारिवारिक कलह से भी मुक्ति मिलेगी। ट्रस्ट में मुख्य शर्त यही होगी कि पारिवारिक सदस्य उस संपत्ति का उपयोग कर सकते हैं, जीर्ण-शीर्ण होने पर उसका रखरखाव कर सकते हैं, पुनर्निर्माण कर सकते हैं, परंतु उस संपत्ति को बेचना या खरीदना निषिद्ध रहेगा। आज गांव और शहरों में संपत्ति को लेकर स्थिति में कोई विशेष फर्क नहीं है। सभी जगह भाई-बंटवारे के कारण अक्सर विवाद की स्थितियां निर्मित होती रहती हैं। यदि बाप-दादा अपनी संपत्ति से मोह कम कर इसका ट्रस्ट बना देंगे तो इससे ग्रामीण और शहरी क्षेत्र में संयुक्त परिवार बचेंगे। इसके समस्त कानूनी पहलुओं पर विचार करने की सख्त आवश्यकता है। समाज में बुजुर्गों की दशा सुधारने की दिशा में यह महत्वपूर्ण कदम होगा। सर्वोदय अथवा सत्य, प्रेम, करुणा, निर्भय, निर्वैर, निष्पक्ष विचार में विष्वास करने वाले मनुष्य इस व्यक्तिगत ट्रस्ट का नाम 'सर्वोदय-दंपत्ति ट्रस्ट' रख सकते हैं। विष्व में शांति-स्थापना की शुरुआत सत्ता प्रतिष्ठानों से नहीं बल्कि परिवार से होगी।

संदर्भ ग्रन्थ

1 संरक्षताका सिद्धांत: गांधीजी

2 साम्ययोगी समाज: विनोबा: खण्ड 18

3 विनोबा के आर्थिक विचारों का विश्लेषणात्मक अध्ययन: पल्लवी शुक्ला

4 ट्रस्टीशिप: नरेंद्र दुबे

5 गोविभा